॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

कृष्णयजुर्वेदीय

गर्भोपनिषद्

शान्तिपाठ

ॐ सह नाववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै।
तेजस्वि नावधीतमस्तु। मा विद्विषावहै॥
ॐ शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

गर्भकी उत्पत्ति एवं वृद्धिके प्रकार

ॐ शरीर पञ्चात्मक, पाँचोंमें वर्तमान, छः आश्रयोंवाला, छः गुणोंके योगसे युक्त, सात धातुओंसे निर्मित, तीन मलोंसे दूषित, दो योनियोंसे युक्त तथा चार प्रकारके आहारसे पोषित होता है। पञ्चात्मक कैसे है? पृथिवी, जल, तेज, वायु, आकाश (—इनसे रचा हुआ होनेके कारण) शरीर पञ्चात्मक है। इस शरीरमें पृथिवी क्या है? जल क्या है? तेज क्या है? वायु क्या है? और आकाश क्या है? इस शरीरमें जो कठिन तत्त्व है, वह पृथिवी है; जो द्रव है, वह जल है; जो उष्ण है, वह तेज है; जो सञ्चार करता है, वह वायु है; जो छिद्र है, वह आकाश कहलाता है। इनमें पृथिवी धारण करती है, जल एकत्रित करता है, तेज प्रकाशित करता है, वायु अवयवोंको यथास्थान रखता है, आकाश अवकाश प्रदान करता है। इसके अतिरिक्त श्रोत्र शब्दको ग्रहण करनेमें, त्वचा स्पर्श करनेमें, नेत्र रूप ग्रहण करनेमें, जिह्वा रसका आस्वादन करनेमें, नासिका सूँघनेमें, उपस्थ आनन्द लेनेमें तथा पायु मलोत्सर्गके कार्यमें लगा रहता है। जीव बुद्धिद्वारा ज्ञान प्राप्त करता है, मनके द्वारा सङ्कल्प करता है, वाक्-इन्द्रियसे बोलता है।

शरीर छः आश्रयोंवाला कैसे है? इसलिये कि वह मधुर, अम्ल, लवण, तिक्त, कटु और कषाय—इन छः रसोंका आस्वादन करता है। षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पञ्चम, धैवत और निषाद—ये सप्त स्वर तथा इष्ट, अनिष्ट और प्रणिधानकारक (प्रणवादि) शब्द मिलाकर दस प्रकारके शब्द (स्वर) होते हैं। शुक्ल, रक्त, कृष्ण, धूम्र, पीत, कपिल और पाण्डुर—ये सप्त रूप (रंग) हैं॥ १॥

सात धातुओंसे निर्मित कैसे है? जब देवदत्तनामक व्यक्तिको द्रव्य आदि भोग्य-विषय जुड़ते हैं, तब उनके परस्पर अनुकूल होनेके कारण षट्रस पदार्थ प्राप्त होते हैं—जिनसे रस बनता है। रससे रुधिर, रुधिरसे मांस, मांससे मेद, मेदसे स्नायु, स्नायुसे अस्थि, अस्थिसे मज्जा और मज्जासे शुक्र—ये सात धातुएँ उत्पन्न होती हैं। पुरुषके शुक्र और स्त्रीके रक्तके संयोगसे गर्भका निर्माण होता है। ये सब धातुएँ हृदयमें रहती हैं, हृदयमें अन्तराग्नि उत्पन्न होती है, अग्निस्थानमें पित्त, पित्तके स्थानमें वायु और वायुसे हृदयका निर्माण सृजन-क्रमसे होता है॥ २॥

ऋतुकालमें सम्यक् प्रकारसे गर्भाधान होनेपर एक रात्रिमें शुक्र-शोणितके संयोगसे कलल बनता है। सात रातमें बुद्बुद बनता है। एक पक्षमें उसका पिण्ड (स्थूल आकार) बनता है। वह एक मासमें कठिन होता है। दो महीनोंमें वह सिरसे युक्त होता है, तीन महीनोंमें पैर बनते हैं, पश्चात् चौथे महीने गुल्फ (पैरकी घुट्टियाँ), पेट तथा कटि-प्रदेश तैयार हो जाते हैं। पाँचवें महीने पीठकी रीढ़ तैयार होती है। छठे महीने मुख, नासिका, नेत्र और श्रोत्र बन जाते हैं। सातवें महीने जीवसे युक्त होता है। आठवें महीने सब लक्षणोंसे पूर्ण हो जाता है। पिताके शुक्रकी अधिकतासे पुत्र, माताके रुधिरकी अधिकतासे पुत्री तथा शुक्र और शोणित दोनोंके तुल्य

होनेसे नपुंसक संतान उत्पन्न होती है। व्याकुलचित्त होकर समागम करनेसे अन्धी, कुबड़ी, खोड़ी तथा बौनी संतान उत्पन्न होती है। परस्पर वायुके संघर्षसे शुक्र दो भागोंमें बँटकर सूक्ष्म हो जाता है, उससे युग्म (जुड़वाँ) संतान उत्पन्न होती है। पञ्चभूतात्मक शरीरके समर्थ—स्वस्थ होनेपर चेतनामें पञ्च ज्ञानेन्द्रियात्मक बुद्धि होती है; उससे गन्ध, रस आदिके ज्ञान होते हैं। वह अविनाशी अक्षर ॐकारका चिन्तन करता है, तब इस एकाक्षरको जानकर उसी चेतनके शरीरमें आठ प्रकृतियाँ (प्रकृति, महत्-तत्त्व, अहङ्कार और पाँच तन्मात्राएँ) तथा सोलह विकार (पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पाँच स्थूल भूत तथा मन) होते हैं। पश्चात् माताका खाया हुआ अन्न एवं पिया हुआ जल नाड़ियोंके सूत्रोंद्वारा पहुँचाया जाकर गर्भस्थ शिशुके प्राणोंको तृप्त करता है। तदनन्तर नवें महीने वह ज्ञानेन्द्रिय आदि सभी लक्षणोंसे पूर्ण हो जाता है। तब वह पूर्व-जन्मका स्मरण करता है। उसके शुभ-अशुभ कर्म भी उसके सामने आ जाते हैं॥ ३॥

तब जीव सोचने लगता है—'मैंने सहस्रों पूर्व-जन्मोंको देखा, उनमें नाना प्रकारके भोजन किये, नाना प्रकारके—नाना योनियोंके स्तनोंका पान किया। मैं बारम्बार उत्पन्न हुआ, मृत्युको प्राप्त हुआ। अपने परिवारवालोंके लिये जो मैंने शुभाशुभ कर्म किये, उनको सोचकर मैं आज यहाँ अकेला दग्ध हो रहा हूँ। उनके भोगोंको भोगनेवाले तो चले गये, मैं यहाँ दुःखके समुद्रमें पड़ा कोई उपाय नहीं देख रहा हूँ। यदि इस योनिसे मैं छूट जाऊँगा—इस गर्भके बाहर निकल गया तो अशुभ कर्मोंका नाश करनेवाले तथा मुक्तिरूप फलको प्रदान करनेवाले महेश्वरके चरणोंका आश्रय लूँगा। यदि मैं योनिसे छूट जाऊँगा तो अशुभ कर्मोंका नाश करनेवाले और मुक्तिरूप फल प्रदान करनेवाले भगवान् नारायणकी शरण ग्रहण करूँगा। यदि मैं योनिसे छूट जाऊँगा तो अशुभ कर्मोंका नाश करनेवाले और मुक्तिरूप फल प्रदान करनेवाले सांख्य और योगका अभ्यास करूँगा। यदि मैं इस बार योनिसे छूट गया तो मैं ब्रह्मका ध्यान करूँगा।' पश्चात् वह योनिद्वारको प्राप्त होकर योनिरूप यन्त्रमें दबाया जाकर बड़े कष्टसे जन्म ग्रहण करता है। बाहर निकलते ही वैष्णवी वायु (माया)-के स्पर्शसे वह अपने पिछले जन्म और मृत्युओंको भूल जाता है और शुभाशुभ कर्म भी उसके सामनेसे हट जाते हैं॥ ४॥

देह-पिण्डका 'शरीर' नाम कैसे होता है? इसलिये कि ज्ञानाग्नि, दर्शनाग्नि तथा जठराग्निके रूपमें अग्नि इसमें आश्रय लेता है। इनमें जठराग्नि वह है, जो खाये, पिये, चाटे और चूसे हुए पदार्थोंको पचाता है। दर्शनाग्नि वह है, जो रूपोंको दिखलाता है; ज्ञानाग्नि शुभाशुभ कर्मोंको सामने खड़ा कर देता है। अग्निके शरीरमें तीन स्थान होते हैं—आहवनीय अग्नि मुखमें रहता है। गार्हपत्य अग्नि उदरमें रहता है और दक्षिणाग्नि हृदयमें रहता है। आत्मा यजमान है, मन ब्रह्मा है, लोभादि पशु हैं, धैर्य और संतोष दीक्षाएँ हैं, ज्ञानेन्द्रियाँ यज्ञके पात्र हैं, कर्मेन्द्रियाँ हवि (होम करनेकी सामग्री) हैं, सिर कपाल है, केश दर्भ हैं, मुख अन्तर्वेदिका है, सिर चतुष्कपाल है, पार्श्वकी दन्तपङ्क्तियाँ षोडश कपाल हैं, एक सौ सात मर्मस्थान हैं, एक सौ अस्सी संधियाँ हैं, एक सौ नौ स्नायु हैं, सात सौ शिराएँ हैं, पाँच सौ मज्जाएँ हैं, तीन सौ साठ अस्थियाँ हैं, साढ़े चार करोड़ रोम हैं, आठ पल (तोले) हृदय है, द्वादश पल (बारह तोला) जिह्वा है, प्रस्थमात्र (एक सेर) पित्त, आढकमात्र (ढाई सेर) कफ, कुडवमात्र (पावभर) शुक्र तथा दो प्रस्थ (दो सेर) मेद है; इसके अतिरिक्त शरीरमें आहारके परिमाणसे मल-मूत्रका परिमाण अनियमित होता है। यह पिप्पलाद ऋषिके द्वारा प्रकटित मोक्षशास्त्र है, पैप्पलाद मोक्षशास्त्र है॥ ५॥

॥ गर्भोपनिषद् समाप्त॥

शान्तिपाठ

ॐ सह नाववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै।
तेजस्वि नावधीतमस्तु। मा विद्विषावहै॥
ॐ शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!